सहरिया आदिवासी - बुंदेलखंड के सबसे पिछड़े और वंचित जनजातियों

..... प्रमोद भार्गव द्वारा शिवपुरी जिले का एक अध्ययन

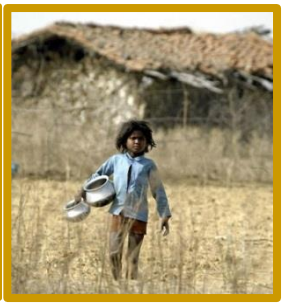

शिवपुरी जिला सहरीया आदिवासी बहुल है। बावजूद विकास और सुरक्षा के हर स्तर पर आदिवासियों के हाल बेहाल हैं। दूरांचल या दुर्गम क्षेत्रों की बात तो छोड़िए शिवपुरी नगर पालिका क्षेत्र और माधव राष्ट्रीय उधान सीमा से सटी कठमई बस्ती के समस्त आदिवासी बदतर हाल में हैं। वनों में प्रवेश और प्राकृतिक सांपदा से बेदखल ये सहरिया पूरी तरह आहार के लिए या तो प्राश्रित हैं या सरकार की दया पर निर्भर हैं। खाध सुरक्षा की

दृष्टि से खेती की जमीन इनके पास है नहीं और चारे की कमी के कारण ये दुधारू मवेशी नहीं पालते। लिहाजा इन्हें कभी-कभी भूखा तो कभी अधपेट खाकर भी गुजारा करना होता है। समुचित आहार की कमी के साथ 700 की जनसंख्या वाली इस बस्ती में पेयजल की कोई सुविधा नहीं है। आजादी के बाद से लेकर अब तक एक भी नलकूप का खनन इस बस्ती में नहीं हुआ है। लोगों को एक किलोमीटर दूर जाकर पत्थर उधोग से जुड़े कारखानों से पानी लाना पड़ता है। यहां बिजली भी नहीं है।

कठमई बस्ती नगर पालिका परिषद शिवपुरी के वार्ड क्रमांक-1 का हिस्सा है। वार्ड सीमा में आने वाली मुख्य बस्ती से कठमई की दूरी करीब 2 कीमी है। नगर पालिका क्षेत्र का यदि विस्तार नहीं हुआ होता तो कठमई एक स्वंतत्र असितत्व का गांव होता और संभवत:चंदनपुरा ग्राम का हिस्सा होता। पंचायत क्षेख् कठमई बस्ती होती तो यहां ग्राम पंचायत के कम से कम तीन वार्ड होते, मसलन तीन पंच यहां से चुने जाते। किसी एक बस्ती के एक ही समाज के तीन पंच होते तो तय था कि यहां जीवन की सुरक्षा से जुड़े उपाय कहीं बेहतर होते। तीन पंचो ने मिलकर एक नलाकूप तो बस्ती में लगवा ही लिया होता ? बिजली आ गई होती ? 70 घर और 700 की आबादी वाले इस गांव में महज 5 लोग ऐसे है, जिनके पास पटटे पर मिली खेती की जमीनें हैं। इनके नाम भरोसी, सुन्ना, कल्ला, मानसिंह और धन्ना हैं। यह जमीन पथरीली और रांकड़-मुरम युक्त है। जाहिर है, उपजाउ नहीं है। इसलिए जिस साल अच्छा पानी बरसता है, तब यहां बमुश्किल तिल्ली और उड़द

की फसल हों पाती हैं। इस फसल को बेचने के बाद इतनी आय नहीं हो पाती कि एक परिवार की पूरे साल के लिए खाध सुरक्षा मुमकिन हो जाए। पैदा फसल को रखने के लिए भी इनके पास कोई पुख्ता उपाय नहीं हैं। इसलिए इन्हें फसल जल्दी बेचनी होती है। जिसके बाजिव दाम नहीं मिलते। मिटटी खराब होने के कारण गेहूं, ज्वार और मक्का जैसी पोषक तत्वों वाली फसलें ये लोग बोते ही नहीं हैं।

प्रकृति और खेती-किसानी से कटे होने के कारण यह बस्ती खाध सुरक्षा के लिए पूरी तरह सरकारी योजनाओं और अनियमित मजदूरी पर निर्भर है। मजदूरी इन्हें चार क्षेत्रों में मिलती है - i) भवन निर्माण में वेलदारी, ii) फसल के समय अन्य ग्रामों के खेतों में निंदाई-गुड़ाई व फसल कटाई, iii) स्टोन पालिशिंग उधोगों में पत्थर

ढुलाई व लदाई, और iv) चंदनपुरा की पत्थर खदानों में खण्डा तोड़ने का काम। ये काम अकुशल मजदुरी की श्रेणी में आते हैं, इसलिए इन्हें मजदूरी कम मिलती है। खेतों में काम करें, चाहे भवन निर्माण के क्षेत्र में अथवा पत्थर करखानों में 120 से 150 तक की रोजाना के हिसाब से मजदूरी इन्हें मिलती है। वह भी नियमित नहीं

होती। यदि कुशल मजदूर होते तो इन्हें 500 रूपये तक की मजदूरी पत्थर उधोग और भवन निर्माण क्षेत्रों में मिल सकती थी। लेकिन यह तो न करीगरी में कुशल हैं और न ही पत्थर उधोग की कंटिग व पालिश मशीन चलानें में। इस अकुशलता के चलते इन्हें आजीवन साधारण कहले या अकुशल मजदूर रहकर ही जीवन गुजारना होता है, जिससे मिली मजदूरी से इनकी संपूर्ण खाध सुरक्षा नहीं हो पाती। नतीजतन इन्हें भूखे रहकर भी गुजारा करना होता हैं। रामभजन कहते भी हैं हर सीजन के समय ठीक -ठाक मजदूरी मिल जाती है,बाकी के दिन मुश्किल में काटने होते हैं। गोया पर्याप्त भोजन के अभाव में ये लोग हटटे-कटटे व तंदुरुश्त नहीं होते हैं। इसी कारण ज्यादातर सहरिया की मृत्यु की औसत आयु लगभग 50 वर्ष की आसपास हैं।

यह अच्छी बात है कि बस्ती के लगभग सभी परिवारों के पास बीपीएल कार्ड हैं। इन्हें 34 किलो गेहूं तो प्रति माह मिलते हैं, लेकिन शक्कर और तेल कभी नहीं मिले। चावल भी कभी नहीं मिले। यह अनाज इन्हें 2 किमी दूर इसी वार्ड की बस्ती बछौरा से लाना पड़ता है। कहा जा सकता है,यही गेहूं इनकी खाध सुरक्षा का प्रमुख आधार है। इसमें कुछ गेहू इसलिए नष्ट हो जाता है, क्योंकि इनके पास इस 34 किलो गेंहू को सुरक्षित रखने के पर्याप्त साधन नहीं होते। गेहूं सीमेंट के कटटे में रखा जाता है, जिन्हें चूहे आसानी से आहार बना लेते हैं, तो कुछ मौसम की मार, मसलन सीड़ से खराब हो जाता है। 40 साल की कल्ली कहती है," अनाज रखने को टंकियां घरों में नहीं हैं। पहले खेत की काली मिटटी से कुठिला बना लेते थे, लेकिन अब लोच वाली चिकनी मिटटी मिलती हीं नहीं। कुम्हार पहले कनारियां बनाकर बेचते थे, पर अब कनारी कोई नहीं बनाता, सो अनाज कटटों में ही रखना होता है।

इस बस्ती में एक अच्छी बात यह है कि यहां पाठशाला में मध्यान्ह भोजन और आगंनवाड़ी केंद्र में पोषक आहार नियामिन बंटता है। पोषक आहार सुविधा के अंतर्गत 0 से 5 साल तक के बच्चों को दलिया, सतुआ और दाल रोटी दिए जाते हैं। इस केंद्र की प्रभारी शशीकांता की जबावदेही को सभी ने स्वीकारा। शशीकांता ने बताया, 50-60 बच्चे नियमित केंद्र में आकर भोजन करते हैं। हमारी कोशिश रहती है कि एक भी बच्चा आहार से वंचित न रह जाए। इस काम में हमें बस्ती के लोगों का पूरा सहयोग मिलता है।इसी तरह यहां मध्यान्ह भोजन की वितरण में गड़बड़ी की शिकायतें नहीं मिली। विधार्थियों व अभिभावकों ने समवेत स्वर में स्वीकारा कि यहां त्योहारों के दिन खीर-पूड़ी दिए जाते हैं। हां, शिक्षक पढ़ाई जरूर नहीं कराते, रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर और गप्पबाजी में समय पास करके चलते बनते हैं।

जब माधव राष्ट्रीय उधान में प्रवेश पर सख्ती नहीं थी, तब ग्रामीण खरहा, खरगोश जैसे छोटे वन्य जीवों को भी मारकर आहार बना लेते थे। कुछ पक्षियों का भी यह शिकार कर लिया करते थे। लेकिन अब शिकार पूरी तरह प्रतिबंधित है। वनाधिकार कानून के तहत प्रदेश के सभी आदिवासियों को आरक्षित वनों में उपलब्ध लघु वनोपजों और शहद तोड़ने की छूट है। ये सिर पर जितनी लकड़ी रखकर ला सकते हैं, उसे लाने की छूट है।

किंतु वनकर्मी इन्हें ऐसा करने नहीं देते। लकड़ी लाने पर प्रति मोहरी गटठर रिश्वत ली जाती है। कभी-कभी तो जुरमाना तक लगा देते हैं। कैलाश आदिवासी कहते हैं, कभी-कभी यह जुरमाना दो से तीन हजार तक होता है। उधान के वन संरक्षक शरद गौड़ पूछने पर कहते हैं, 'सिर पर रखकर लकड़ी लाने पर कोई रोक नहीं है, लेकिन बैलगाड़ी या साइकल पर लकड़ी नहीं ला सकते। जो ऐसा करते हैं, उन्हीं के विरूद्ध वनाधिकार कानून के तहत कार्रवाई की जाती है। बहरहाल यदि वनकर्मियों का शोषण समाप्त हो जाए और इन्हें लघु वनोपज लाने की छूट मिल जाए तो इस बस्ती के लोगों की खाध सुरक्षा की एक कड़ी पुख्ता हो सकती है। बस्ती में लगे जंगलों में महुआ, तेंदू, आवला, बेर, अचार और शहद बड़ी मात्रा में पैदा होते हैं। लेकिन आदिवासी इनके उपभोग से पूरी तरह वंचित हैं। जबकि इन फलों को वनकर्मी तुड़वाकर बाजार में बेचकर पौ-बारह करते रहते हैं।

यहां की आशा कार्यकर्ता गोमती आदिवासी बेहद सक्रिय है। गोमती दसवीं पास है। यदि किसी गर्भवती महिला को प्रसव का समय आता है, तो वह तुरंत मोबाईल से संपर्क साधकर जननी एकप्रेस को बुलाती है और प्रसूता को अस्पताल पहुंचाती है। इसलिए इस बस्ती की अधिकांश डिलेवरियां जिला चिकित्सालय में हो रही हैं। गोमती ही इन महिलाओं को संस्थागत प्रसव के अंतर्गत मिलने वाली धनराशी एक हजार रूपये दिलाती है। इस राशि से पोषक आहार के लिए विस्वार के लडडू और हरीला बनाकर खिलाया जाता है। हालांकि गोमती ही कहती है, 'इतनी राशि से मंहगाई के जमाने में कुछ नहीं बन पाता। देशी घी के दाम ही 500 रूपये किलोग्राम है। इस राशि को बढ़ाने की जरूरत है। बावजूद बस्ती के एक कुपोषित बच्चे का उपचार शिवपुरी के कुपोषण केंद्र में चल रहा है।

आधुनिकता ने इन सहरियों को आलसी भी बना दिया है। बस्ती की महिलाएं अब चकिया से गेहूं नहीं पिसतीं। इससे राजनीतिक कर्णधारों को यह कहने का मौका मिल जाता है कि सरकारी सुविधाओं के चलते सहरिया संपन्न हो रहे हैं। घर का मर्द आटो से गेहूं नौहरी ले जाकर चक्की पर पिसाकर लाता है। ये पशुधन और मुर्गीपालन से जुड़ जाएं तो इनकी आर्थिक सिथति मजबूत हो सकती है। हालांकि इन्हें सुखी और संपन्न बनाए रखने के लिए जरूरी है कि इनका वनोपजों के उपयोग में ईमानदारी से भागीदारी सुनिशिचत की जाए।

****